

# गरीबों की शिक्षा

अरविन्द गुप्ता

कुछ महीने पहले छपी शिक्षा पर एक पुस्तक 'वर्क हार्ड, बी नाईस' ने अमरीका में काफी तहलका मचाया। पुस्तक को जे मैथ्यूज ने लिखा है। पुस्तक को बहुत सराहना मिली - बिल गेट्स ने अपने एक भाषण में इसकी बहुत तारीफ की और सारे श्रोताओं को इसकी एक-एक प्रति मुफ्त भेजने का ऐलान किया।

यह कहानी है दो जांबाज और उत्साही लोगों की जिन्होंने अमरीका में पिछड़े वर्ग के गरीब बच्चों के लिए शिक्षा का एक अपार सफल मॉडल रचा है। पते की बात यह है कि दोनों - माईक फाइनबर्ग और डेव लेविन पेशे से शिक्षक नहीं थे। सोलह वर्ष पहले जब वे यूनिवर्सिटी में पढ़ते थे तब अमरीका में एक मुहिम चला था - नाम था 'टीच फॉर अमरीका'। इसमें यूनिवर्सिटी के उच्च शिक्षा प्राप्त लोगों को, गरीब बच्चों के स्कूलों में जाकर पढ़ाना था।

अमरीकी समाज में भी शिक्षा के मामले में गरीब-अमीर बच्चों के बीच बहुत भेदभाव है। रईसों के बच्चों के लिए उम्दा स्कूल, अच्छे शिक्षक और फिर उनके नतीजे भी अच्छे। दूसरी ओर गरीबों के बच्चों के लिए कम सुविधाएं और अप्रेरित शिक्षक। नतीजा साफ है - गरीबी से जूझते बच्चे, स्कूल जैसी थोपी व्यवस्था को झेल नहीं पाते। वे जल्द ही झुलस जाते हैं - फेल होते हैं, कम नंबर पाते हैं। अंत में स्कूल से निकाल दिए जाते हैं अथवा मजबूरी के कारण स्कूल छोड़ देते हैं। यह गरीब मूलतः स्पैनिश और ब्लैक्स होते हैं। यह वही मेहनतकश हैं जो खून-पसीना बहाकर, सबसे निम्न काम करके अमरीका को एक महान राष्ट्र बनाते हैं।

माईक और डेव ने 'टीच फॉर अमरीका' कार्यक्रम की उपलब्धियों और खामियों दोनों से बहुत कुछ सीखा। उन्होंने दो ऐसे प्रेरक शिक्षकों को तलाशा जिन्होंने गरीब बच्चों को सिखा पाने में अपार सफलता हासिल की थी। उनके तरीकों का बारीकी से अध्ययन, मनन-चिंतन किया और उनका कार्यक्रम में समावेश किया। बाद में कुछ अन्य प्रेरित शिक्षकों के सहयोग से उन्होंने 'के आई पी पी' ('किप' - नालिज इज पॉवर प्रोग्राम) कार्यक्रम शुरू किया। यह कार्यक्रम अब 19 राज्यों के 66 स्कूलों में चल रहा है और इसमें 16000 से भी अधिक छात्र पढ़ रहे हैं। यह स्कूल पांचवी से आठवीं के बच्चों के लिए हैं। 'किप' के 80 प्रतिशत बच्चे गरीब घरों के हैं। उनमें से 95 प्रतिशत मूलतः स्पैनिश या ब्लैक्स हैं। अभी तक जिन 1400 बच्चों ने 'किप' का 3-वर्षीय कोर्स पूरा किया है उनके नंबरों में बड़ा उछाल आया है। भाषा में उनका स्कोर जो पहले औसतन 34 था अब बढ़कर 58 हुआ है। गणित में तो इससे भी कहीं बेहतर परिणाम मिले हैं - उनका स्कोर 44 से कूद कर लगभग दुगना यानि 83 हुआ है! गरीब बच्चों के शिक्षण के किसी कार्यक्रम को अमरीका में आज तक इतनी बड़ी सफलता नहीं हासिल हुई है।

माईक और डेव के लिए यह चुनौती तमाम मुश्किलों से भरी थी। उनकी यूनिवर्सिटी की पढ़ाई इसमें कुछ खास काम नहीं आई, शुरू में बच्चों का बर्ताव एकदम अहसनीय था, स्कूली शासन भी गरीब बच्चों के प्रति पूर्णतः उदासीन था। परंतु फिर भी इन दोनों ने अपना संघर्ष कायम रखा - कक्षाओं में अनुशासन बनाए रखा, मां-बाप से घरों में जाकर मिले और उनकी समस्याएं सुनीं, बच्चों की स्पैनिश बोलने की क्षमता को बढ़ाया। स्कूल के घंटों को भी बढ़ाया। स्कूल हफ्ते में छह दिन, सुबह साढ़े-सात से शाम पांच बजे - नौ घंटे लगने लगा। शनिवार और गर्मी की छुट्टियों में भी स्कूल तीन हफ्तों के लिए खुला रहता। हर छात्र को शिक्षक का टेलीफोन दिया गया जिससे कि होमवर्क या अन्य किसी दिक्कत में वे शिक्षक से संपर्क साध सकें।

'किप' कार्यक्रम पांच बुनियादी उसूलों पर टिका है - ऊंची अपेक्षाएं, लचीलापन एवं लगाव, लंबे घंटे, प्रेरक लीडरशिप और नतीजों पर फोकस। 'किप' के छात्र रोजाना नौ घंटे, यानि सामान्य छात्रों से 60 प्रतिशत ज्यादा समय स्कूल में बिताते हैं। पढ़ाई के साथ-साथ खेल-कूद, अनुभव द्वारा शिक्षण और व्यक्तिगत विकास पर भी काफी बल दिया जाता है। इतने लंबे घंटों के बावजूद 'किप' के स्कूलों में हाजिरी 96 प्रतिशत रहती है। 'किप' से निकले 80 प्रतिशत छात्रों ने कालेजों में दाखिला लिया है और लगभग ढाई करोड़ अमरीकी डॉलर वजीफों के रूप में जीते हैं। सामान्यतः ब्लैक और स्पैनिश मूल के केवल 20 प्रतिशत बच्चे ही कालेज जा पाते हैं। 'किप' के कारण इस संख्या में बहुत उछाल आया है। 'किप' का नारा है - चाहें छात्र कितना भी कमजोर क्यों न हो, वो डटकर मेहनत करे और कालेज जाए। हरेक मां-बाप के मन में अपने बच्चों को कालेज भेजने की ललक होती है। वे भी इसमें सहयोग देते हैं। कालेज की डिग्री पाकर गरीब छात्रों का मनोबल बढ़ता है और जीवन के बहुत से बंद दरवाजे उनके लिए सदा के खुल जाते हैं।

हमारे देश में भी इस प्रकार की सीमित सफलताओं के कई उदाहरण हैं। पटना में श्री आनंद कुमार - गणितज्ञ द्वारा चलाई जा रही 'सुपर-30' स्कीम इसकी एक अद्वितीय मिसाल है। 2003 से वो हर वर्ष, 30 गरीब बच्चों के लिए यह कार्यक्रम चलाते हैं। इनमें बहुत से बच्चे पिछड़ी जातियों और निम्न वर्ग के हैं जिनके माता-पिता खेती या मजदूरी करते हैं। इनमें से चयनित बच्चों

को दो साल की मुफ्त ट्रेनिंग, रहने और खाने की व्यवस्था दी जाती है। फिर वे आई आई टी की प्रवेश परीक्षा में बैठते हैं। हर वर्ष इनमें से 90 प्रतिशत छात्र, दुनिया की सबसे कठिन समझी जाने वाली इस परीक्षा में सफल होते हैं। 2008 की परीक्षा में 100 प्रतिशत बच्चों को सफलता मिली। श्री आनंद कुमार गणित की एक अन्य कोचिंग क्लास चलाते हैं और उससे अर्जित कमाई को इन गरीब बच्चों पर खर्च करते हैं।

इस प्रयोगों से हम क्या सबक सीख सकते हैं? गरीब, निरक्षर परिवारों में जन्में बच्चों में भी वही प्रतिभा होती है जो अमीर-धनी बच्चों में होती है। 'जीनोम' प्रोजेक्ट भी यही दिखाता है - दुनिया के हरेक शाख्स के 99.999 प्रतिशत जीन्स लगभग समान होते हैं। इसलिए जाति, वर्ग, गरीबी के आधार पर किसी को बौद्धिक रूप से होशियार या कमजोर करार देना सरासर गलत है। परिस्थितियां अनुकूल होने पर यह गरीब छात्र भी प्रगति कर सकते हैं और अक्वल कालेजों में दाखिला पा सकते हैं।

जो अभियान आज से 16 वर्ष पूर्व अमरीका में चला था वही मुहिम अब भारत में भी दोहराया जा रहा है। 'टीच फॉर इंडिया' नाम के इस कार्यक्रम के अंतगत 100 अत्यंत प्रेरित कार्यकर्ता मुंबई और पुणे के सरकारी म्यूनिसिपल स्कूलों में दो वर्ष तक पढ़ायेंगे और वहां नई ऊर्जा का संचार करेंगे। इसमें 100 भर्तियों के लिए 2000 प्रोफेशनल्स ने अपनी अर्जियां भेजीं। इनमें से 76 प्रतिशत लोग अच्छी नौकरियां पर स्थापित हैं - कई आई आई टी और आई आई एम के स्नातक हैं। वे सभी एक माह का प्रशिक्षण पाने के बाद अपने वर्तमान वेतन से एक तिहाई तनखाह (मात्र पंद्रह हजार रुपए माहवारी) पर सरकारी स्कूलों में पढ़ायेंगे। पढ़े-लिखे लोगों में समाज के गरीब तबके के लिए इस प्रकार का दर्द होना एक बहुत अच्छी बात है। यह अभियान का पहला चरण है। बाद की रणनीति नतीजों के बाद तय की जाएगी। अभियान का सारा खर्च निजी ट्रस्ट - डेल फाउंडेशन, मेकिंजी एवं थर्मक्स उठाएंगी।

इस प्रकार के प्रयोग एक ओर समाज की सुप्त ऊर्जा को एक दिशा प्रदान करते हैं। पर दूसरी ओर कई बुनियादी प्रश्न भी उठाते हैं। क्या प्रयोग महज एक बेहतर 'डिलेवरी' तंत्र है या उसमें एक नए समाज, एक नई शिक्षा का दर्शन भी है। अगर वर्तमान शिक्षा में ही कुछ खोट है, तो खोटा सिक्का और अधिक तेजी से चलाने से क्या लाभ? क्या महान शिक्षाविदों गिजुभाई, रबीन्द्रनाथ ठाकुर, नील, गांधी, होल्त के शिक्षा-दर्शन का इसमें कुछ समावेश है? कोटा के कोचिंग क्लासेज में रट्टा मार कर आई आई टी में दाखिला पाने वाले छात्र क्या कभी अच्छे इंसान बन पाएंगे? क्या स्वप्रेरित कार्यकर्ताओं की पूर्व पढ़ाई इस प्रयोग में कहीं काम आएगी? क्या 100 से बढ़कर इनकी संख्या कभी लाखों तक पहुंचेगी? सवाल और भी हैं। परंतु अभी के लिए सरकारी स्कूली की बेहतरी के लिए किए जा रहे इस प्रयोग का स्वागत और इसे गहराई से समझने की कोशिश की जानी चाहिए।

